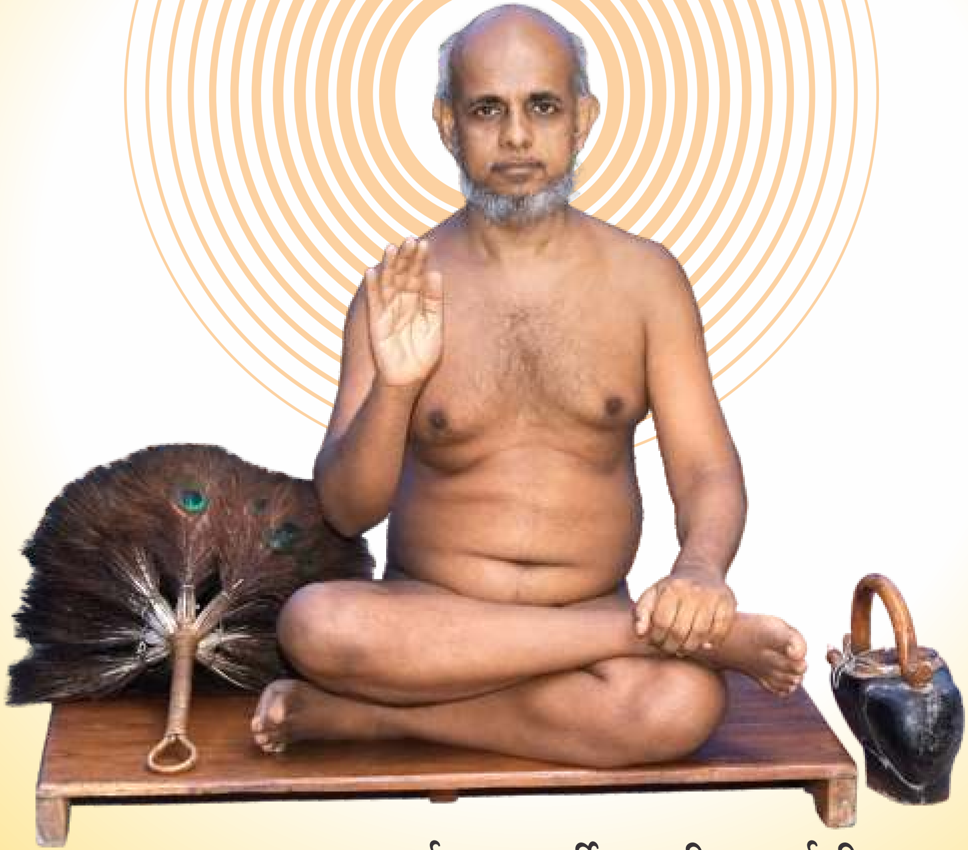

परम पूज्य तपश्चर्या-चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि-परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19-03-1971 * मुनिदीक्षा-11-05-1989 * आचार्यपद- 20-06-2004

पट्टाधीशपद- 24-12-2010 (20-06-2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः-

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी-जुलाई 2004) (अक्षयज्योति-अक्तूबर 2004)

विशद कर्मनिर्झर विधान

कृतिकार :

परम पूज्य आचार्यश्री विशदसागर जी महाराज

प्राप्तिस्थान

विशद साहित्य केन्द्र

श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, कुआँ वाला, जैनपुरी रेवाड़ी (हरियाणा)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

श्री वीतरागाय नमः।

विशद

कर्म निर्झर विधान

माण्डला

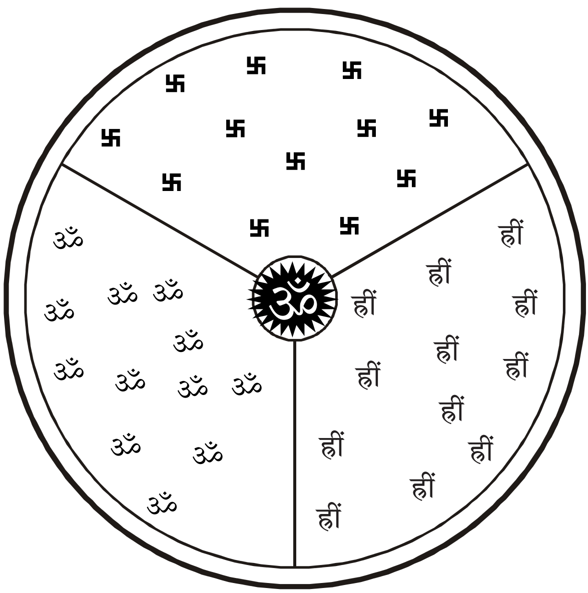

रचयिता

प. पू. साहित्य रत्नाकर आचार्य श्री विशदसागर जी महाराज

-: प्रकाशक :-

विशद साहित्य केन्द्र

कृति : **कर्म निर्झर व्रत विधान**

कृतिकार : **प. पू. साहित्य रत्नाकर आचार्य**
श्री विशदसागर जी महाराज

संकलन : मुनि श्री 108 विशालसागर जी महाराज

सहयोगी : क्षुल्लक श्री 105 विसोमसागर जी महाराज
वात्सल्य भारती माताजी, क्षुल्लिका भक्तिभारती जी

संपादन : ब्र. ज्योति दीदी (9829076085), ब्र. आस्था दीदी (9660996425), ब्र. सपना दीदी (9829127533)

संयोजन : ब्र. सोनू दीदी, ब्र. आरती दीदी

संस्करण : प्रथम 2016 (1000 प्रतियाँ)

मूल्य : 10/- (पुनः प्रकाशन हेतु)

सम्पर्क सूत्र : (1) **विशद साहित्य केन्द्र**
श्री दिगम्बर जैन मन्दिर कुआँ वाल जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा), मो. 9812502062

(2) **हरीश जैन**
जय अरिहन्त ट्रेडर्स, 6561 नेहरु पाली
नियर लाल बत्ती चौक, गांधी नगर, दिल्ली
मो. 098181157971, 09136248971

(3) **निर्मल कुमार गोधा**
2142 निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट,
मनिहारों का रास्ता, जयपुर
मो. 0141-2319907, 9414812008

(4) **सुरेश जैन**
पी-958, गली नं. 3, शान्ति नगर, दुर्गापुरा, जयपुर
मो. 9413336017

पुण्यार्जक : **मदनलाल अरुणकुमार पाटनी**
बी-47, वशिष्ठ मार्ग, श्याम नगर, जयपुर, मो. 9829015533

e-mail : vishadsagar11@gmail.com

प्रकाशक : **विशद साहित्य केन्द्र**

मुद्रक : **पिक्सल 2 प्रिंट, जयपुर,** हेमन्त जैन (बड़ागाँव) मो. 9509529502

कर्मों की विशाल श्रृंखला टूटेगी कर्म निर्झर व्रत से

संसार अनन्त है, संसार में रहने वाले जीव भी अनन्त हैं, न संसार का अन्त है और न जीव का अन्त है। हम अनादिकाल से संसार में संचरण कर रहे हैं, कहीं किनारा नहीं मिला, संसार में प्रत्येक जीव स्वयं में एक है अन्त संसार का नहीं हो सकता और न जीवों का ही होगा; किन्तु हम अपने संसाार का अन्त अवश्य ही कर सकते हैं। अपने संसार का अन्त करने के लिए संसार से विरक्त होना पड़ेगा। संसार ऐसा सागर है जो असीम है अनन्त है, अतः हमें संसार की ओर नहीं स्वयं की ओर देखना है। चतुर्गति 84 लाख योनियों में भ्रमण करने के बाद कहीं ठिकाना नहीं मिला, पंच परावर्तन रूप संसार में कभी पृथ्वी कायिक, जल कायिक, अग्नि कायिक, वायु कायिक, वनस्पति कायिक जीवों में जन्म लेकर सम्पूर्ण लोक में प्रत्येक क्षेत्र में घूमते रहे। यह क्रम अनादि से अनन्तों बार चलता रहा है। अब हमें अपने अनन्त संसार का अन्त कर प्रभु की तरह शुद्ध बुद्ध बनने का लक्ष्य बनाना है। कर्मों की सन्तति को निर्जीण कर संसार चक्रव्यूह से छूटने का प्रयास करना है। अनादि निधन जैनधर्म में व्रतों के माध्यम से शक्ति के अनुसार तपश्चरण करके आत्म शक्ति को वृद्धिंगत करने का विधान है। इसके अन्तर्गत सोलहकारण, दशलक्षण, रत्नत्रय, रविव्रत, सुगन्ध दशमी व्रत आदि अनेक प्रकार के महिमाशाली व्रत आते हैं जिनको विधिपूर्वक करने से तदनुरूप फल की प्राप्ति होती है।

इसी क्रम में यह कर्म निर्झर व्रत भी एक है। जैन समाज में कर्म निर्झर व्रत के तेले का काफी महत्त्व है। इसे झर का तेला अथवा जलहर व्रत या कर्म निर्झर व्रत आदि कई नामों से पुकारा जाता है। यह व्रत भाद्रपद शुक्ला 12-13-14 तीन दिन किया जाता है। निगोदादि बारह मिथ्या निवास का नाश, बारह तप एवं बारह भावना इन तीन का चिन्तवन इस व्रत में किया जाता है। इन्हीं के अनुरूप मंडल बनता है जिसमें बीच में गोलकार समुच्चय पूजा के लिए होता है तथा तीन कोठे होते हैं जिनमें प्रत्येक में क्रमशः12-12-12 चिह्न होते हैं जिनमें उक्त बारह-बारह अर्घ्य चढ़ाये जाते हैं।

कर्म निर्झर व्रत के उद्यापन के अवसर पर परम पूज्य आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज द्वारा रचित यह कर्म निर्झर व्रत पूजा विधान सम्पूर्ण क्रिया विधि से उत्साह पूर्वक करना चाहिए। व्रत के दिनों में कर्म निर्झर व्रत की पूजा व प्रतिदिन की अलग-अलग जाप्य करते रहना चाहिए।

संकलन - **मुनि विशाल सागर जी महाराज**

विशद

कर्म निर्झर व्रत विधान

(दोहा)

अष्ट कर्म को नाश कर, बने सिद्ध भगवान।
रागादिक परभाव तज, प्रगटाए निज ज्ञान।।
छियालिस गुण धारी हुए, श्री जिनवर अरहंत।
कर्म घातिया नाशकर, पाए ज्ञान अनन्त।।
चार ज्ञान धारी हुए, गौतमादि गणराज।
संयमधारी साधु पद, पूज रहे हम आज।।
जिनवाणी जिन भारती, करती ज्ञान प्रदान।
नय प्रमाण मुक्ती सहित, दे विद्या का दान।।
जिन चैत्यालय चैत्य हैं, मंगलमय मनहार।
काल अनादि अनन्त है, जैन धर्म शिवकार।।
कर्म निर्जरा व्रत रहा, कर्म निर्जरा वान।
तीन योग से धारते, जिसको श्रद्धावान्।।
जलहर निर्झरणी विशद, कर्म निर्जरा नाम।
तीन दिवस करते इसे, तीन वर्ष अविराम।।
माह भाद्रपद शुक्ल की, बारस तेरस जान।
चौदश का उपवास हो, यह तेला पहिचान।।
द्वादश मिथ्यावास तज, द्वादश तप को धार।
द्वादश अनुप्रेक्षा विशद, चिन्तें हो उपकार।।
पूनम को मण्डल रचो, तीन वलय का सार।
द्वादश-द्वादश कोष्ठ का, मध्य ओम् शिवकार।।
तीन योग से शुद्ध हो, करना विशद विधान।
नृत्य गीत संगीतमय, करना प्रभु गुणगान।।

उद्यापन करके सभी, पात्रों को दे दान।
बारह-बारह वस्तुएँ, भाव से करें प्रदान।।
उद्यापन न कर सकें, तो व्रत दूना होय।
व्रत से होवे निर्जरा, नहीं है संशय कोय।।
जीवन में सुख शांति हो, प्राणी भाग्य जगाए।
इसमें संशय नहीं है, मुक्ती रमा को पाए।।
अत: सभी ये व्रत करें, अपनी शक्ति विचार।
बिना शक्ति फल ना मिले, यही जिनागम सार।।
शक्ति छिपाएँ ना कभी, ना प्रमाद उर लाए।
मिले नहीं सुख जीव को, तीन काल दुख दाए।।
बाल वृद्ध रोगी जनों, से होवे उपहास।
अत: वयस्क जन भाव से, करें तीन उपवास।।
पावन व्रत की पीठिका, आगम के अनुसार।
लिखी भाव से जो यहाँ, है प्रमाण वह सार।।
भवि जीवों के लिए व्रत, यह गाया हितकार।
विशद भाव से यह करो, शुभ विधि के अनुसार।।
किए जीव कई पूर्व में, आगे करें महान।
इसी भाव से यह लिखा, पावन परम विधान।।
भूल चूक को भूलकर, क्षमा करो धीमान।
कर्म निर्जरा कर विशद, पाना पद निर्वाण।।

इति पठित्वा पुष्पांजलि क्षिपेत्

कर्म निर्झर व्रत जाप्य मंत्र

प्रथम दिन : **ॐ ह्रीं द्वादश-मिथ्या-निवास हराय भगवज्जिनाय नमः।**

द्वितीय दिन : **ॐ ह्रीं द्वादश-तप-धारकाय-भगवज्जिनाय नमः।**

तृतीय दिन : **ॐ ह्रीं द्वादश-भावना-चिंतक भगवज्जिनाय नमः।**

गंध कुटी स्थित जिन पूजा

(दोहा)

चौबीसों अतिशय सहित, अनन्त चतुष्टय वान।
प्रातिहार्य वसु पाए जिन, हैं छियालिस गुणवान।।
दोष अठारह से रहित, गुणानन्त के धाम।
वीतराग सर्वज्ञ जिन, चरणों विशद प्रणाम।।
तीर्थंकर गणधर सहित, देते हित उपदेश।
आह्वानन करते हृदम, जिनका यहाँ विशेष।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल–नंदीश्वर पूजा)

भर लाए प्रासुक नीर, चरणों धार करें।
पा जाएँ भव का तीर, तीनों रोग हरें।।
प्रभु कर्म निर्जरा हेतु, हम गुण गाते हैं।
हे नाथ! आपकी आज, महिमा गाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

चन्दन की परम सुवास, चारों दिश महके।
हो भव आताप विनाश, मन मेरा चहके।।
प्रभु कर्म निर्जरा हेतु, हम गुण गाते हैं।
हे नाथ! आपकी आज, महिमा गाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

अक्षत ये धवल महान, धोकर के लाए।
पद अक्षय मिले प्रधान, अर्चा को आए।।
प्रभु कर्म निर्जरा हेतु, हम गुण गाते हैं।
हे नाथ! आपकी आज, महिमा गाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

यह पुष्प लिए शुभकार, पावन गंध भरे।
हो काम रोग निरवार, मन आह्लाद करें।।
प्रभु कर्म निर्जरा हेतु, हम गुण गाते हैं।
हे नाथ! आपकी आज, महिमा गाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

नैवेद्य लिए रसदार, पूजा को आए।
हो क्षुधा रोग परिहार, जिन महिमा गाए।।
प्रभुकर्म निर्जरा हेतु, हम गुण गाते हैं।
हे नाथ! आपकी आज, महिमा गाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि स्वाहा।

यह जला रहे शुभ दीप, मोह तिमिर नाशी।
अर्पित कर चरण समीप, होवे शिववासी।।
प्रभु कर्म निर्जरा हेतु, हम गुण गाते हैं।
हे नाथ! आपकी आज, महिमा गाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

यह धूप जलाएँ नाथ, आठों कर्म नशें।
हम चरण झुकाएँ माथ, वसु गुण हृदय वसें।।
प्रभु कर्म निर्जरा हेतु, हम गुण गाते हैं।
हे नाथ! आपकी आज, महिमा गाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

फल ताजे ले रसदार, पूज रहे स्वामी।
हम पाएँ मुक्ती द्वार, बने प्रभु शिवगामी।।
प्रभु कर्म निर्जरा हेतु, हम गुण गाते हैं।
हे नाथ! आपकी आज, महिमा गाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

आठों द्रव्यों का अर्घ्य, चढ़ाकर हर्षाएँ।
हम पाके सुपद अनर्घ्य, मोक्ष पदवी पाएँ।।

प्रभु कर्म निर्जरा हेतु, हम गुण गाते हैं।
हे नाथ! आपकी आज, महिमा गाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा- नीर भराया कूप से, देने शांती धार ।
शांति पाएँ हम विशद, वन्दन बारम्बार।।

शान्तये शांतिधारा

उपवन के यह पुष्प ले, अर्चा करते देव।
जब तक मुक्ती ना मिले, ध्याएँ तुम्हें सदैव।।

पुष्पांजलि क्षिपामि

जयमाला

दोहा- गंधकुटी में शोभते, तीर्थंकर भगवान।
जयमाला गाते यहाँ, करते हैं गुणगान।।

(ज्ञानोदय छन्द)

समवशरण सौभाग्य प्रदायक, भव्य जीव का शरणागार।
सदा बरसती है श्री मुख से, चिदानन्द मय अमृत धार।।
निज स्वाभाव में लीन हुए तव, प्रभु जो ध्याये शुक्ल ध्यान।
मोहनीय क्षय कर प्रगटाया, यथाख्यात चारित्र महान।।1।।
फिर एकत्व वितर्क ध्यान कर, प्रगटाए प्रभु केवल ज्ञान।
लोकालोक ज्ञान में प्रभु जी, दर्शाए प्रतिबिम्ब समान।।
गुणानन्त के धारी चिन्मय, चेतन चन्द अपूर्व महान।
समवशरण में शोभा पाए, राग रहित जिन आभावान।।2।।
तन्मय होकर निज वैभव में, भोगें प्रभु आनन्द अपार।
सभी ज्ञान में ज्ञेय झलकते, नहीं ज्ञेय के जो आधार।।
जहाँ धर्म की वर्षा होवे, समवशरण वह मंगलकार।
कल्पतरु सम भवि जीवों को, रहा लोक में शुभ आधार ।।3।।

इन्द्रराज की आज्ञा पाकर, धनपति रचना करें महान।
निज की कृति ही भाषित होवे, आश्चर्यकारी आभावान।।
दर्श अनन्त ज्ञान सुख बल से, सदा सुशोभित हों जिनराज।
चौंतिस अतिशय प्रातिहार्य युत, विशद ज्ञान के होते ताज।।4।।
वैभव अंतर्वाह्य निरखकर,भव्य लहें आनन्द अपार।
प्रभु के चरण कमल में वन्दन, कर पाएँ नर सौख्य अपार।।
कृत्रिम रचना समवशरण की, करें विशद जो अतिशयकार।
जिनबिम्बों को स्थापित कर, पूजा करते मंगलकार।।5।।

दोहा – तीर्थंकर भगवान हैं, गुणानन्त के कोष।
महिमा गाते हम यहाँ, जीवन हो निर्दोष।।

ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा – महिमा गाते आपकी, हे जिनवर तीर्थेश।
कर्म निर्जरा कर विशद, पाएँ निज स्वदेश।।

इत्याशीर्वादः

द्वादश मिथ्यावास छेदक पूजा

स्थापना

मिथ्यावास भ्रमण का कारण, तीन लोक में गाया है।
सम्यक् दर्शन जिसने पाया, मोक्ष मार्ग अपनाया है।।
रत्नत्रय को पाने वाले, बन जाते हैं जिन अर्हन्त।
विशद ज्ञान को पाने वाले, करते कर्मों का भी अन्त।।

दोहा– तीन लोक में पूज्य हैं, तीर्थंकर भगवान ।
मिथ्यावास निवारने, करते हम आह्वान।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर आह्वानन्।
ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(ज्ञानोदय छन्द)

निर्मल नीर चढ़ाकर भी प्रभु, हमने बहु दुख पाए हैं।
जन्म जरादिक व्याधि नाश हम, करने को प्रभु आए हैं।।
द्वादश मिथ्यावास छेद हों, प्रभु महिमा हम गाते हैं।
जागे मम सौभाग्य विशद हम, यही भावना भाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन में केसर घिसकर के, सदा चढ़ाते आए हैं।
भव सन्ताप नशाने के शुभ, हमने भाव जगाए हैं।।
द्वादश मिथ्यावास छेद हों, प्रभु महिमा हम गाते हैं।
जागे मम सौभाग्य विशद हम, यही भावना भाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

धोकर के तन्दुल सुवास मय, चरणों सदा चढ़ाए हैं।
भव सिन्धू को पार करें, अक्षय पद पाने आए हैं।।
द्वादश मिथ्यावास छेद हों, प्रभु महिमा हम गाते हैं।
जागे मम सौभाग्य विशद हम, यही भावना भाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्राय अक्षय पदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

काम कषाय परिग्रह पाके, भव के रोग बढ़ाए हैं।
पुष्प चढ़ाकर काम रोग की, बाधा हरने आए हैं।।
द्वादश मिथ्यावास छेद हों, प्रभु महिमा हम गाते हैं।
जागे मम सौभाग्य विशद हम, यही भावना भाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

रस पूरित नैवेद्य बनाकर, हमने बहुत चढ़ाए हैं।
क्षुधा रोग हो नाश हमारा, विशद भावना भाए हैं।।

द्वादश मिथ्यावास छेद हों, प्रभु महिमा हम गाते हैं।
जागे मम सौभाग्य विशद हम, यही भावना भाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वर्ण रजत के दीप अनेकों, घृतमय सदा जलाए हैं।
मोह तिमिर छाया अनादि जो, उसको हरने आए हैं।।
द्वादश मिथ्यावास छेद हों, प्रभु महिमा हम गाते हैं।
जागे मम सौभाग्य विशद हम, यही भावना भाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयागिरि की धूप सुगन्धित, हमने सदा जलाई है।
कर्म नाश करने की शुधि अब, मन में मेरे आई है।।
द्वादश मिथ्यावास छेद हों, प्रभु महिमा हम गाते हैं।
जागे मम सौभाग्य विशद हम, यही भावना भाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाप पुण्य के फल भव-भव में, सदा शुभाशुभ पाए हैं।
मोक्षमहाफल पाने को फल, यहाँ चढ़ाने आए हैं।।
द्वादश मिथ्यावास छेद हों, प्रभु महिमा हम गाते हैं।
जागे मम सौभाग्य विशद हम, यही भावना भाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधाक्षत पुष्प चरू शुभ, दीप धूप फल लाए हैं।
अर्घ्य चढ़ाकर पद अनर्घ्य शुभ, पाने को हम आए हैं।।
द्वादश मिथ्यावास छेद हों, प्रभु महिमा हम गाते हैं।
जागे मम सौभाग्य विशद हम, यही भावना भाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं मिथ्यावास निवारक भगवज्जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- पूरी होवे कामना, नाथ आपके द्वार।
अत: आपके पद युगल, देते शांती धार।।

शान्तये शांतिधारा

दोहा- त्रिभुवन पति त्रिलोक में, शुभ फल के दातार ।
पुष्पांजलि करते चरण, कर दो भव से पार।।

पुष्पांजलि क्षिपेत

अर्घ्यावली

दोहा- वारण करने के लिए, द्वादश मिथ्यावास।
पुष्पांजलि करते विशद, होवे ज्ञान प्रकाश।।

प्रथम वलयोपरि पुष्पांजलि क्षिपामि

(वीर छन्द)

काल अनादि निगोद वास में, जन्म मरण करते हैं जीव।
श्वांस अठारह भाग आयु में, प्राणी पाते दु:ख अतीव।।
लोक भ्रमण का कारण होता, है जीवों को मिथ्यावास।
श्री जिनेन्द्र की अर्चा करके, करना सम्यक् ज्ञान प्रकाश।।1।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने निगोदमिथ्यानिवास दुख विनाशनाय श्री मज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पर्वत खान कठोर कांकरी, में पृथ्वीकायिक के जीव।
जन्म मरण मारण तापन के, महा दु:ख जो पाएँ अतीव।।
लोक भ्रमण का कारण होता, है जीवों को मिथ्यावास।
श्री जिनेन्द्र की अर्चा करके, करना सम्यक् ज्ञान प्रकाश।।2।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने पृथ्वीकायिकमिथ्यानिवासहराय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पाला ओस मेघ जल बुद्बुद में, जलकायिक जीव विशेष।
झरना अग्नी में तापन के, दुख पाते हैं जीव अशेष।।

लोक भ्रमण का कारण होता, है जीवों को मिथ्यावास।
श्री जिनेन्द्र की अर्चा करके, करना सम्यक् ज्ञान प्रकाश।।3।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने जलस्थावरमिथ्यानिवासहराय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

लोह काष्ठ तृण तेज धूप की, अग्नि बनकर जले प्रधान।
जलकायिक सब जीव काष्ठ का, अनुभव करते सदा महान।।
लोक भ्रमण का कारण होता, है जीवों को मिथ्यावास।
श्री जिनेन्द्र की अर्चा करके, करना सम्यक् ज्ञान प्रकाश।।4।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने अग्निकायिकमिथ्मानिवासहराय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पंखा पवन प्रभंजन वायु, वातादिक बन बारम्बार।
कष्ट सहे जीवों ने भारी, जिनका कथन रहा दुस्वार।।
लोक भ्रमण का कारण होता, है जीवों को मिथ्यावास।
श्री जिनेन्द्र की अर्चा करके, करना सम्यक् ज्ञान प्रकाश।।5।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने वायुकायिकमिथ्यानिवासहराय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

घास फूस तरु वेल फूल फल, काई आदिक बनके जीव।
वनस्पति में काटन मारन, पशु चारन दुख पाए अतीव।।
लोक भ्रमण का कारण होता, है जीवों को मिथ्यावास।
श्री जिनेन्द्र की अर्चा करके, करना सम्यक् ज्ञान प्रकाश।।6।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने वनस्पतिकायिकमिथ्यानिवासहराय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

शंख सीप लट कोड़ी कीड़े, प्राणी बनकर भटक रहे।
दो इन्द्रिय बनकर के कुचले, शीत उष्ण के कष्ट सहे।।
मिथ्यावास के कारण भाई, दुख पावें प्राणी अतिघोर।
जिन चरणों में श्रद्धा जागे, मन हो भाव विभोर।।7।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने द्वीन्द्रियजनित मिथ्यानिवास विनाशनाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

जू पिपीलिका बिच्छू खटमल, त्रि इन्द्रिय की देह धरी।
जले गले दबकर दुख पाए, औरों की भी शांति हरी।।
मिथ्यावास के कारण भाई, दुख पावें प्राणी अतिघोर।
जिन चरणों में श्रद्धा जागे, मन हो भाव विभोर।।8।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने त्रीन्द्रियजनित मिथ्यानिवास विनाशाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

मक्खी भ्रमर मसक टिड्डी बन, किए अनेकों जन्म मरण।
नाथ छुड़ाओ इन दुःखों से, पड़े आपकी चरण शरण।।
मिथ्यावास के कारण भाई, दुख पावें प्राणीअतिघोर।
जिन चरणों में श्रद्धा जागे, मन हो भाव विभोर।।9।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने चतुरिन्द्रयजनितमिथ्यानिवास विनाशाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

जलचर थलचर नभचर पशुओं में, सबलों ने घात किया।
भार वहन आदिक दुख भोगे, नहीं किसी ने साथ दिया।
मिथ्यावास के कारण भाई, दुख पावें प्राणीअतिघोर।
जिन चरणों में श्रद्धा जागे, मन हो भाव विभोर ।।10।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने तिर्यंचगतिजनितमिथ्यानिवासहराय विनाशाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

सप्त नरक में मारन काटन, करें नारकी बारम्बार।
भूख प्यास की सही वेदना, दुःख सहे हैं अपरम्पार।।
मिथ्यावास के कारण भाई, दुख पावें प्राणी अतिघोर।
जिन चरणों में श्रद्धा जागे, मन हो भाव विभोर ।।11।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने नरकगतिजनितमिथ्यानिवासहराय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

है कुभोगभूमि दुखकारी, पंच म्लेच्छ खण्डों के जीव।
भवनत्रिक इन्द्रियों विषयों के, रागी सहते दुःख अतीव।।

मिथ्यावास के कारण भाई, दुख पावें प्राणीअतिघोर।
जिन चरणों में श्रद्धा जागे, मन हो भाव विभोर ।।12।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने कुभोगभूमिम्लेच्छ खण्ड मिथ्यानिवासहराय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

रहते जीव निगोद वास में, स्थावर विकलत्रय जान।
नरक पशू नर मिथ्यावासी, देव गति के भी पहिचान।।
मिथ्यावास के कारण भाई, दुख पावें प्राणीअतिघोर।
जिन चरणों में श्रद्धा जागे, मन हो भाव विभोर।।13।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने मिथ्यानिवासहराय भगवज्जिनाय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा ।

जयमाला

दोहा- भ्रमण करें संसार में, करके मिथ्यावास।
जयमाला गाते यहाँ, भव का मैटें त्रास।।

(चौपाई)

बार अठारह श्वॉस में जानो, जन्म मरण होता है मानो।
काल अनन्त निगोद भ्रमाए, जन्म मरण के दुख बहु पाए।।1।।
पृथ्वी बनकर खोद कराया, चूना माटी में पिसवाय।
जल बनकर के बहु दुख पाए, राध गालकर के दुःख पाए।।2।।
पावक बनकर पाप कमाए, लकड़ी तृण में जले जलाए।
वायू के संग खाए थपेड़े, आँधी बनके रूख उखड़े।।3।।
घास पूस तरु बन उगबाए, शीत उष्ण के दुख बहु पाए।
थावर की क्या कहें कहानी, काटे राधो बहु दुख दानी।।4।।
दो इन्द्रिय लट में उपजाए, त्रय इन्द्रिय चींटी बन आए।
कोई दाब दिए दुखभारी, सहन किए होके लाचारी।।5।।
चउ इन्द्रि मक्खी जन्माए, तेलादिक में फँस दुख पाए।
है तिर्यन्च गती दुखदायी, प्रतिफल होय असाता भाई।।6।।
कोई लादें मारे बाँधें, कोई जूड़ा धरते काँधे।
कोई नाथें आर लगावें, कोई जला के चिह्न बनावें।।7।।

तृण खाकर भी दूध पिलावें, फिर भी उनको मार लगावें।
कोई बनता मूक सिपाही, करता है सबकी सिवकाई।।8।।
दुख का आगर नरक बताया, प्रभु जाने या जिसने पाया।
असुरादिक के देव भिड़ावें, मुदगरादि से मार लगावें।।9।।
गर्म लोह बनिता चिपकावें, घानी में ले जाए पिरावें।
भूख भयंकर जहाँ सतावे, फिर भी दाना वहाँ ना पावें।।10।।
प्यासा रहकर काल गवाँवें, पानी एक बूँद ना पावें।
नरकों के दुख सहे ना जाएँ, उनसे मुक्ती कैसे पाएँ।।11।।
मानव हैं कुभोग भू वाले, हैं विडरूप भयंकर काले।
पंच म्लेच्छ बुरे दुख दाता, मानव गति में होय असाता।।12।।
मिथ्यावासी नर दुखयारे, तीन लोक में होवें सारे।
भवनत्रिक के देव कहावें, मिथ्यावास करें दुख पावें।।13।।
भू जल अग्नी वायु कहावें, योनी सात-सात लख पावें।
वनस्पति कायिक जो गाए, वे दश लाख योनियाँ पाए।।14।।
चौदह लाख योनि के धा3री, हैं निगोदिया जीव दुखारी।
दो इन्द्रिय लट आदिक जानों, योनी दो लख इनकी मानो।।15।।
त्रय इन्द्रिय जो जीव बताए, योनी दोय लाख वे पाए।
चउ इन्द्रिय भ्रमरादिक प्राणी, दो लख योनी जिनकी मानी।16।।
लख चार योनियाँ वे पावें, जो नरक गति प्राणी जावे।
पंचेन्द्रिय पशु जो भी गाए, चउ लाख योनियाँ जो पाए।।17।।
मानव की चौदह लाख रहीं, ये सर्व योनि जिनदेव कहीं।
जिनदेव कुवास नशाए हैं, जो ज्ञान निधी प्रगटाए हैं।।18।।
जो मुक्ती मार्ग प्रकाश करें, जग जीवों का संक्लेश हरें।
इस हेतु चरण श्रद्धान किया, हे नाथ विशद गुणगान किया।।19।।

दोहा - भव दुख सिन्धु अपार है, पाना जिसका पार ।
चरण वन्दना कर रहे, जिन पद बारम्बार।।20।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने मिथ्यानिवासहराय भगवज्जिनाय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा ।

दोहा- मिथ्यावास मिटायकर, पाएँ सुगति निवास ।
यही भावना है विशद, पूरी होवे आस।।

इत्याशीर्वादः

द्वादश तप सूचक द्वितिय वलय पूजा

स्थापना

बाह्याभ्यन्तर तप को धारण, करते हैं मुनिवर अनगार।
कर्म निर्जरा करते अतिशय, तप के द्वारा अपरम्पार।।
रत्नत्रय का पालन करते, अनशनादि तप करते घोर।
निज आतम का ध्यान लगाकर, करते मन को भाव विभोर।।

दोहा- कर्म निर्जरा कर रहे, तप कर मुनि महाराज।
आह्वानन् करते हृदय, नाथ आपका आज।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक भगवज्जिनेन्द्र! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानन्। ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक भगवज्जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक भगवज्जिनेन्द्र! अत्र मम् सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(तर्ज-माता तू दया करके)

हम भक्ति भाव का जल, अर्चा करने लाए।
प्रभु श्रद्धा भक्ती से, तव चरण शरण आए।।
तप द्वादश शुभकारी, हम पूज रचाते हैं।
हम शिव पदवी पाएँ, प्रभु महिमा गाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

शीतल चन्दन लेकर, जिन चरण चढ़ाते हैं।
भवताप नाश होवे, हम महिमा गाते हैं।।
प्रभु श्रद्धा भक्ती से, तव चरण शरण आए।
तप द्वादश शुभकारी, हम पूज रचाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

हम अक्षत पद पाने अक्षत ये लाए हैं।
शिव पदवी पाने के, शुभ भाव बनाए हैं।।
प्रभु श्रद्धा भक्ती से, तव चरण शरण आए।
तप द्वादश शुभकारी, हम पूज रचाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

यह पुष्प मनोहर शुभ, अर्चा को लाए हैं।
रुज काम नाश करने, चरणों सिरनाए हैं।।
प्रभु श्रद्धा भक्ती से, तव चरण शरण आए।
तप द्वादश शुभकारी, हम पूज रचाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

यह क्षुधा रोग नाशी, नैवेद्य बनाए हैं।
हे नाथ चरण में हम, पूजा को आए हैं।।
प्रभु श्रद्धा भक्ती से, तव चरण शरण आए।
तप द्वादश शुभकारी, हम पूज रचाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

हम मोह कर्म द्वारा, जग में भटकाए हैं।
यह मोह तिमिर नाशी, हम दीप जलाए हैं।।
प्रभु श्रद्धा भक्ती से, तव चरण शरण आए।
तप द्वादश शुभकारी, हम पूज रचाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

हम कर्मों के द्वारा, सदियों से सताए हैं।
वह कर्म नशाने को, यह धूप जलाए हैं।।
प्रभु श्रद्धा भक्ती से, तव चरण शरण आए।
तप द्वादश शुभकारी, हम पूज रचाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

कर्मों का फल प्राणी, इस जग में पाते हैं।
हम मुक्ती फल पाने, फल यहाँ चढ़ाते हैं।।
प्रभु श्रद्धा भक्ती से, तव चरण शरण आए।
तप द्वादश शुभकारी, हम पूज रचाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

हम पर में खोकर के, निज को विसराए हैं।
यह अर्घ्य चढ़ाने को, हम लेकर आए हैं।।
प्रभु श्रद्धा भक्ती से, तव चरण शरण आए।
तप द्वादश शुभकारी, हम पूज रचाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं द्वादश तप सूचक जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा- विशद शांति की आश ले, आए आपके द्वार।
शांती धारा दे रहे, पाने भवदधि पार।।

शांतये शांतिधारा

शिव पद पाने के लिए, पूजा करते नाथ!
पुष्पांजलि करते यहाँ, मिले आपका साथ।।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

अर्घ्यावली

दोहा - कर्म निर्जरा के लिए, तप तपते मुनिराज।
पुष्पांजलि करते अतः, पाने शिव साम्राज्य।।

द्वितीय वलयोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(वीर छन्द)

विजय क्षुधा पर पाने ऋषिवर, भोजन त्याग करें अनशन।
विषय विकारों के विनाश को, करें नियन्त्रित अपना मन।।
बाह्य सुतप को तपने हेतू, करें साधना योगीजन।
कर्म निर्जरा करने को हम, करते हैं जिन पद वन्दन।।1।।

ॐ ह्रीं अनशन तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मुनिवर अल्पाहारी होके, करें भूख से कम भोजन।
ऊनोदर तप कहलाए यह, लोलुपता का करें शमन।।
बाह्य सुतप को तपने हेतू, करें साधना योगीजन।
कर्म निर्जरा करने को हम, करते हैं जिन पद वन्दन।।2।।

ॐ ह्रीं ऊनोदर तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भोजन की आशक्ति मिटाने, करते व्रत्ती परिसंख्यान।
लेते हैं आहार मुनीजन, श्रावक देवें भोजन दान।।
बाह्य सुतप को तपने हेतू, करें साधना योगीजन।
कर्म निर्जरा करने को हम, करते हैं जिन पद वन्दन।।3।।

ॐ ह्रीं वृत्तिपरिसंख्यान तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भोजन में जो स्वाद बढ़ाएँ, ऐसे छह रस कहलाए।
एकादिक या छहों रसों के, त्यागी मुनि तपधर गाए।।
बाह्य सुतप को तपने हेतू, करें साधना योगीजन।
कर्म निर्जरा करने को हम, करते हैं जिन पद वन्दन।।4।।

ॐ ह्रीं रसपरित्याग तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

निष्कम्पित आसन पर मुनिवर, स्वाध्याय पा करते ध्यान।
विविक्त शैय्यासन के धारी मुनि, करते स्व-पर का कल्याण।।
बाह्य सु तप को तपने हेतू, करें साधना योगीजन।
कर्म निर्जरा करने को हम, करते हैं जिन पद वन्दन।।5।।

ॐ ह्रीं विविक्त शैय्यासन तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विकसित करने आत्म शक्ति को, मुनिवर धारें काय क्लेश।
शीत उष्ण की बाधा सहकर, कर्म नशाते मुनी अशेष।।
बाह्य सुतप को तपने हेतू, करें साधना योगीजन।
कर्म निर्जरा करने को हम, करते हैं जिन पद वन्दन।। 6।।

ॐ ह्रीं कायक्लेश तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रायश्चित्त तप के धारी मुनि, करते पापों का छेदन।
किए गये अपराधों का वे, भाव सहित करते शोधन।।

अंतरंग तप करने वाले, तीर्थंकर के लघुनन्दन।
कर्म निर्जरा हो तप करके, चरणों में करते अर्चन।।7।।

ॐ ह्रीं प्रायश्चित तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दर्श ज्ञान चारित्र और तप, विनय कही पंचम उपचार।
कर्म श्रृखंला का विनाश कर, विनय सुतप खोले शिवद्वार।।
अंतरंग तप करने वाले, तीर्थंकर के लघुनन्दन।
कर्म निर्जरा हो तप करके, चरणों में करते अर्चन।।8।।

ॐ ह्रीं विनय तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आचार्योपाध्याय शैक्ष्य तपी गण, साधु मनोज्ञ संघ कुल ग्लान।
भाव सहित इनकी सेवा है, वैय्यावृत्ती श्रेष्ठ महान।।
अतरंग तप करने वाले, तीर्थंकर के लघुनन्दन।
कर्म निर्जरा हो तप करके, चरणों में करते अर्चन।।9।।

ॐ ह्रीं वैय्यावृत्ति तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आलस त्याग ज्ञान आराधन, कहलाए स्वाध्याय विशेष।
वाचन पृच्छन आम्नाय अरु, अनुप्रेक्षा है धर्मोपदेश।।
अतरंग तप करने वाले, तीर्थंकर के लघुनन्दन।
कर्म निर्जरा हो तप करके, चरणों में करते अर्चन।।10।।

ॐ ह्रीं पंचविध स्वाध्याय तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बाह्याभ्यन्तर उपधि कही है, जिसके भेद कहे चौबीस।
तीन योग से उसके त्यागी, व्युत्सर्ग तप धारी अवशेष।।
अतरंग तप करने वाले, तीर्थंकर के लघुनन्दन।
कर्म निर्जरा हो तप करके, चरणों में करते अर्चन।।11।।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्ग तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आर्तरौद्र द्वय ध्यान छोड़कर, धर्म शुक्ल करते हैं ध्यान ।
निज आतम में लीन यतीश्वर, स्वयं जगाते केवलज्ञान।।
अतरंग तप करने वाले, तीर्थंकर के लघुनन्दन।
कर्म निर्जरा हो तप करके, चरणों में करते अर्चन।।12।।

ॐ ह्रीं ध्यान तप सूचकाय भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बाह्य सुतप छह आभ्यन्तर छह, धारण करते मुनि अनगार।
काल अनादी लगे कर्म जो, उनको करते क्षण में क्षार।।
बाह्याभ्यंतर तप करते मुनि, तीर्थंकर के लघुनन्दन।
कर्म निर्जरा हो तप करके, चरणों में करते अर्चन।।13।।

ॐ ह्रीं बाह्यभ्यन्तर सुतप सूचकाय भगवज्जिनाय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा- द्वादश तप धारी मुनि, कर्म निर्जरा वान।
जयमाला गाते यहाँ, करने को गुणगान।।

(चौपाई)

चार प्रकार असन के त्यागी, अनशन वृत धारी बड़ भागी।
लेह्य पेय अरु खाद्य बताये, स्वाद तजे अनशन व्रत पाए।।
भूख से कम जो प्राणी खावें, ऊनोदर धारी कहलावें।
एक दोय त्रय आदिक भाई, वृत परिसंख्या में वस्तु गिनाई।।
षट्रस में रस त्यागें कोई, रस परित्याग कहा ये सोई।
भाव जीव रक्षा का आए, विविक्त शैयासन ये कहलाए।।
गुफा शैल मरू वन में सोवें, एकान्त शयनासन धर होवें।
ग्रीष्म काल पर्वत पे तपते, तरु तल वर्षा में जप जपते।।
सरिता तट पें शीत बितावें, काय क्लेश धारी कहलावें।
पास गुरु आचार्य के जावें, दोष कहें प्रायश्चित भी पावें।।
दर्शन ज्ञान चरण तप गाये,अरु उपचार विनय कहलाए।
जो नर विनय सुतप को धारें, कर्म शत्रु वे शीघ्र निवारें।।
आर्चोपाध्याय शैक्ष्य बताए, रोगी वृद्ध तपस्वी गाए।
इनकी सेवा करें कराएँ, या व्रतीधर कहलाएँ।।
जैनागम को पढ़े पढ़ायें, पूँछे यदि समझ ना पाएँ।
बार-बार चिन्तन से ध्याते, आम्नाय स्वाध्याय को पाते।।

धर्मोपदेश सुने जो ज्ञानी, यह स्वाध्याय कही जिनवाणी।
यह तन विष की वेल कहाए, व्युत्सर्ग तप कर राग घटाए।।
ममता तज समता उपजावें, यही तपस्या श्रेष्ठ कहावे।
आर्त रौद्र दो ध्यान बताए, ज्ञानी जन के मन ना भाए।।
इष्ट वियोग में समता धारे, अनिष्ट संयोग में साम्य विचारैं।
पीड़ा चिन्तन करें ना ज्ञानी, हैं निदान कारी अज्ञानी।।
हिंसाकर आनन्द मनावें, झूठ बोल के सुख जो पावें।
चोरी की ये नई कला सिखावें, परिग्रह पाके जोर जतावें।।
दुर्ध्यान आठ दुखकारी, करें नहीं नर शिवमगचारी।
आज्ञा जिनवर की जो पावें, आज्ञा विचय ध्यान प्रगटावें।।
यह संसार रहा दुखकारी, चिन्तें अपाय विचय के धारी।
ध्यायें कर्म के फल को प्राणी, विपाक विचय धारी वह ज्ञानी।।
तीन लोक स्वरूप विचारे, द्वादश अनुप्रेक्षा मन धारे।
ये संस्थान विचय शुभ जानो, योगी ध्यान करें यह मानो।।
प्रथम पृथक्त्ववितर्क बताया, एकत्व वितर्क दूसरा गाया।
सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाती गाया, व्युपरत क्रिया निवृत्य बताया।।
शुक्ल ध्यान ये चारों जानो, शेष ध्यान इस हेतू मानो।
इस प्रकार द्वादश तप धारी, कर्म निर्जरा करते भारी।।

दोहा- द्वादश तप को धार के, पावें केवलज्ञान।
शिव पथ के राही बने, पावें पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं निर्झरव्रतोद्यापने द्वितिय वलय द्वादश तप सूचकाय भगवज्जिनाय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा- कर्म निर्जरा वे करें, धारें तप जो घोर ।
अष्ट कर्म का नाशकर, बढ़े मोक्ष की ओर ।।

इत्याशीर्वादः

द्वादश अनुप्रेक्षा, सूचक तृतीय वलय पूजा

स्थापना

अनित्यादिक द्वादश अनुप्रेक्षा, का चिन्तन करते ऋषिराज।
मोक्ष मार्ग के राही अनुपम, जो हैं तारण तरण जहाज।।
अनुप्रेक्षा का चिन्तन करके, जागे मेरे हृदय विराग।
विशद भावना भाते हैं हम, धर्म के प्रति जागे अनुराग।।

दोहा- अनुप्रेक्षा का चिंतवन, हम कर सकें विशेष।
आह्वानन करते विशद, तिष्ठो हृदय जिनेश।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक भगवज्जिनेन्द्र! अत्रावरावतर संवौषट् आहवानम्। ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक भगवज्जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक भगवज्जिनेन्द्र! अत्र मम् भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

गंगा जल से क्षीरोदधि से, अपने तन को धोया है।
विषय भोग की माया में ही, जीवन अपना खोया है।।
अनुप्रेक्षा के चिन्तन धारी, जिन पद पूज रचाते हैं।
शिव पथ के राही बन जायें, यह विशद भावना भातें हैं।।1।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक अर्हत् जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

इन्द्रिय विषयों में ही जीवन, मेरा रमाता आया है।
जग वैभव में अटके लेकिन, निज वैभव ना पाया है।।
अनुप्रेक्षा के चिन्तन धारी, जिन पद पूज रचाते हैं।
शिव पथ के राही बन जायें, यह विशद भावना भातें हैं।।2।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक अर्हत् जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा ।

पद अनन्त पाए भव-भव में, तृष्णा शांत ना हो पाई।
श्री जिनेन्द्र का दर्शन करके, अक्षय पद की सुधि आई।।

अनुप्रेक्षा के चिन्तन धारी, जिन पद पूज रचाते हैं।
शिव पथ के राही बन जायें, यह विशद भावना भातें हैं।।3।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक अर्हत् जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा ।

भोगों के ईधन द्वारा क्या, कामाग्नि बुझ सकती है।
ईधन जितना डालो उसमें, उतनी तेज धधकती है।।
अनुप्रेक्षा के चिन्तन धारी, जिन पद पूज रचाते हैं।
शिव पथ के राही बन जायें, यह विशद भावना भातें हैं।।4।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक अर्हत् जिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा ।

शुद्धात्म प्रदेश असंख्यों से, समरस के झरने झरते हैं।
ज्ञानी करते रसपान विशद, जो निज में सदा विचरते हैं।।
अनुप्रेक्षा के चिन्तन धारी, जिन पद पूज रचाते हैं।
शिव पथ के राही बन जायें, यह विशद भावना भातें हैं।।5।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक अर्हत् जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा ।

शुद्धात्म प्रकाशक ज्ञान दीप, श्रद्धा से ज्योतिर्मय होवे।
मिथ्यात्व मोह तम नशते ही, अनुभव शुद्धात्म प्रखर होवे।
अनुप्रेक्षा के चिन्तन धारी, जिन पद पूज रचाते हैं।
शिव पथ के राही बन जायें, यह विशद भावना भातें हैं।।6।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक अर्हत् जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

निज आत्म तत्त्व में तन्मयता, तप की शुभ आग जलाती है।
तव सर्व शुभाशुभ कर्मों की, कालुषता ही जल जाती है।
अनुप्रेक्षा के चिन्तन धारी, जिन पद पूज रचाते हैं।
शिव पथ के राही बन जाये, यह विशद भावना भातें हैं।।7।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक अर्हत् जिनेन्द्राय अष्ट कर्म दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

निज शुद्ध भाव के तरु के फल, शुद्धात्म ध्यान से फलते हैं।
जो आत्म ध्यान की परिणति से, निज मोक्ष महाफल मिलते हैं।।
अनुप्रेक्षा के चिन्तन धारी, जिन पद पूज रचाते हैं।
शिव पथ के राही बन जामें, यह विशद भावना भातें हैं।।8।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक अर्हत् जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा ।

निज ज्ञान अर्घ्य वसु विधि लेकर, ज्ञायक स्वभाव प्रगटाए हैं।
निज पद अनर्घ्य पाने हेतू, हे नाथ! शरण में आए हैं।।
अनुप्रेक्षा के चिन्तन धारी, जिन पद पूज रचाते हैं।
शिव पथ के राही बन जायें, यह विशद भावना भातें हैं।।9।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा सूचक अर्हत् जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

दोहा- शांति की है कामना, शांति की ही आश।
शांति पाकर के विशद, पाएँ शिवपुर वास।।

शान्तये शांतिधारा

प्रभु पूजा के भाव से, हो निर्मल परिणाम।
पुष्पांजलि करते यहाँ, मोक्ष मिले निष्काम।।

पुष्पांजलि क्षिपेत

अर्घ्यावली

दोहा- अनुप्रेक्षा चिन्तन किए, मन में जगे विराग।
पुष्पांजलि करते विशद, नशे राग की आग।।

तृतीय वलयोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

(विष्णुपद छन्द)

धन परिजन गृह सम्पदादि सब, अध्रुव कहलाए।
मोही प्राणी इनको पाकर, अतिशय हर्ष मनाए।

ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।1।।

ॐ ह्रीं अनित्य भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मात पिता सुत दारा भाई, शरण नहीं कोई।
ज्ञानी जीव करें नित चिन्तन, इस प्रकार सोई।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।2।।

ॐ ह्रीं अशरण भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

यह संसार असार बताया, इसमें सार नहीं।
चारों गति में जाकर देखा, सुख ना मिला कहीं।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।3।।

ॐ ह्रीं संसार भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जन्में मरे अकेला प्राणी, कवियों ने गाया।
फिर भी पर को अपना माने, रही मोह माया।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।4।।

ॐ ह्रीं एकत्व भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देहादिक सब अन्य जीव से, सत्य यही गाया।
फिर भी पर में राग लगाए, मोह की ये माया।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।5।।

ॐ ह्रीं अन्यत्व भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मल से बनी देह यह मैली, नव मल द्वार बहे।
कर्मोदय से प्राणी मोहित, अपना इसे कहे।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।6।।

ॐ ह्रीं अशुचि भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मोहादिक के कारण प्राणी, आस्रव नित्य करें।
उसी कर्म के फल भव-भव में, अतिशय दु:ख भरें।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।7।।

ॐ ह्रीं आश्रव भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

गुप्ति समिति व्रत पाने वाले, के संवर होवे।
लगे पूर्व के कर्म जीव के, अपने वह खोवे।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।8।।

ॐ ह्रीं संवर भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कर्म निर्जरा तप के द्वारा, होती है भाई।
अनुक्रम से शिव पद में कारण, होवे सुखदायी।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।9।।

ॐ ह्रीं निर्जरा भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

ऊर्ध्व अधो अरू मध्य लोक यह, पुरुषाकार कहा।
कर्मोदय से प्राणी इसमें, भ्रमता सदा रहा।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।10।।

ॐ ह्रीं लोक भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मिथ्या अविरति योग कषाएँ, प्राणी सब पावें।
बोधी दुर्लभ रही लोक में, जो ना प्रगटावें।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।11।।

ॐ ह्रीं बोधिदुर्लभ भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भव दुख से छुटकारा देने, वाला धर्म कहा।
जिसको पाना विशद हमारा, अन्तिम लक्ष्य रहा।।

ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।12।।

ॐ ह्रीं धर्म भावना चिंतक भगवज्जिनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा

द्वादश अनुप्रेक्षा का चिंन्तन, करना हे भाई।
होता है वैराग्य प्रदायक, पावन शिवदायी।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।13।।

ॐ ह्रीं द्वादश अनुप्रेक्षा चिन्तक भगवज्जिनाय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा- अनुपेक्षा चिन्तन विशद, करते जीव त्रिकाल।
जगे हृदय संवेग शुभ, गाएँ जो जयमाल।।

(ज्ञानोदय छन्द)

आतम का हित है चिन्तन में, चिन्तन कर सुख पाना है।
तीर्थंकर भी भाए भावना, उसमें चित्त लगाना है।।
चक्रवर्ति राजा हो सुरपति, नारायण हो या बलदेव।
आयू पूरी होते सारे, मृत्यु पावें जीव सदैव।।1।।
किन्तु मोह वश जग के प्राणी, राग-द्वेष बढ़ाते हैं।
इनका अस्थिर रूप ना जाने, दुःख व्यर्थ ही पाते हैं।।
अस्त्र शस्त्र दल बल मणि औषधि, मात पिता भाई परिवार।
मरते को ना रोक सके कोई, झूठें हैं सब रिस्तेदार।।2।।
जब यह जान रहे हो जग में, कोई नहीं रखवाला है।
फिर क्यों भूल रहे हो चेतन, जीवन मिटने वाला है।।
निर्धन धन से हीन दुखी है, तृष्णा वश धन वान रहे।
सुख नहिं लेश जगत में भाई, झूठे रिस्ते सर्व कहे।।3।।
जन्म मरण यह जीव अकेला, सुख दुख भी पाए यह एक।
फिर क्यों मात पिता भगिनी सुत, माने अपने जीव अनेक।।

यह शरीर भी नहीं है अपना, गृह क्या साथ निभाएगा।
धन धरती वनिता सुत भाई, कोई साथ ना जाएगा।।4।।
हाड़ माँस चमड़े का तन यह, मल के घड़ा समान कहा।
घिनकारी नव द्वार से बहती, अशुचि रूप जो पूर्ण रहा।।
पोषण करने से दुख देवे, शोषण से सुख उपजावे।
दुर्जन देह स्वभाव जानकर, तन से क्यों प्रीती पावे।।5।।
राग द्वेष से अज्ञानीजन, पर को अपना माने हैं।
मिथ्या अविरति योग कषायी, बन आस्रव को ठाने हैं।।
मोह नींद के उपशम होते, जीव स्वपर को भी जाने।
गुप्ति समीति अनुप्रेक्षा वृष दश, पालन करके सुख माने।।6।।
परिषह जयकर चारित पालन, से कर्मों का होवे रोध।
आते कर्म रुकें सारे ही, जीव जगाए आतम बोध।।
तप के द्वारा होय निर्जरा, चेतन को सुखकारी है।
बिन तप कर्म झरें ना भाई, तप की महिमा न्यारी है।।7।।
स्वर्ग नरक नर तीनों लोकों, की रचना है पुरुषाकार।
भ्रमण करें यह जीव अनादी, भ्रमण करे सारा संसार।।
स्वयं जीव कर्त्ता धर्त्ता है, दूजा नहीं है कोई और।
कर्त्ता धर्त्ता स्वयं जीव यह, अन्य कहीं ना पाए ठौर।8।।
धन दौलत परिवार राज सुख, हमने पाए हैं भारी।
ग्रेवेयक तक जन्म लिए हैं, फिर भी गई मति मेरी मारी।।
सम्यक् ज्ञान बिना भटकाए, श्रद्धा जाग ना पाई है।
आगम ज्ञान ज्ञान आतम का, मुक्ति में बने सहाई है।।9।।
तीन लोक की सम्पत्ति पाए, कोई भी पदवी पाए।
धर्म बिना सुख प्राप्त ना होवे, अतः धर्म निज प्रगटाए।।
द्वादश अनुप्रेक्षा का चिन्तन, करने से ही राग नशे।
निज स्वरूप को पाके प्राणी, सिद्ध शिला पर जाय बशे।।10।।

दोहा- द्वादश भावे भावना, 'विशद' भाव के साथ।
कर्म निर्जरा कर बने, सिद्ध श्री का नाथ।।

ॐ ह्रीं द्वादश भावना अनुप्रेक्षा चिंतक भगवज्जिनाय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा- हित का चिन्तन जो करें, मन में सुमति विचार।
अनुप्रेक्षा बारह सदा, भाएँ हो भव पार।।

इत्याशीर्वादः

जाप : ॐ ह्रीं कर्म निर्जरा व्रतोद्यापने भगवज्जिनाय नमः स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

दोहा- कर्म निर्जरा व्रत किए, हो कर्मों की हान।
जयमाला गाते यहाँ, पाने शिव सोपान।।

(वेसरी छन्द)

श्री जिनेन्द्र की महिमा गाते, पद में सादर शीश झुकाते।
धर्म प्रवर्तन करने वाले, आदिनाथ जी हुए निराले।।
विजय कर्म पर जिनने पाई, अजितनाथ कहलाए भाई।
सम्भवनाथ आप कहलाते, सम्भव सारे कार्य कराते।।
अभिनन्दन पद वन्दन मेरा, तव वन्दन से होय सबेरा।
सुमतिनाथ अति सुमति कराते, अतः लोक में पूजे जाते।।
पद्म प्रभु की महिमा न्यारी, कहलाए जग संकट हारी।
जिन सुपार्श्व पद पूज रचाते, जो जग को सन्मार्ग दिखाते।।
चाँद समान चन्द्रप्रभु गाए, शीतलता जग में फैलाए।
सुवधिनाथ जी सुवधि बताए, जग को मुक्ती मार्ग दिखाए।।
जग को शीतल करने वाले, शीतलनाथ जी हुए निराले।
जिन श्रेयांस श्रेयस के धारी, तीन लोक में मंगलकारी।।
वासुपूज्य हैं पूज्य हमारे, जग जीवों के बने सहारे।
विमल गुणों के धारी गाए, विमलनाथ जिनवर कहलाए।।
अनन्त चतुष्टय के जो धारी, जिनानन्त की महिमा न्यारी।
धर्मनाथ तीर्थंकर जानो, विशद धर्म के धारी मानो।।

(पाईता छन्द)

प्रभु शांति नाथ कहलाए, शांति जीवन में पाए।
श्री कुन्थुनाथ जिन स्वामी, तुम हुए मोक्ष पथगामी।।
जिन अरह नाथ कहलाते, इस जग से पूजे जाते ।
प्रभु मल्लि नाथ जग जेता, कर्मों के आप विजेता।।
हे मुनिसुव्रत व्रत धारी, तुम बने श्रेष्ठ अनगारी ।
हे नमि जिनवर अविकारी, पावन संयम के धारी।।
प्रभु नेमिनाथ कहलाए, करुणा की धार बहाए।
हैं उपसर्गों के जेता, प्रभु पारस कर्म विजेता।।
हे वर्धमान गुणधारी, जग जन के करुणाकारी ।
तीर्थंकर चौबिस गाए, जो शिव पदवी को पाए।।

दोहा- कर्म निर्जरा कर हुए, तीर्थंकर चौबीस।
जिनके चरणों में 'विशद', झुका रहे हम शीश।।

ॐ ह्रीं कर्म निर्जरा व्रतोद्यापने भगवज्जिनाय समुच्चय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा- भक्ति भाव के साथ हम, करते हैं गुणगान।
विशद भावना भा रहे, पाएँ शिव सोपान।।

इत्याशीर्वादः

प्रशस्ति

ॐ नमः सिद्धेभ्यः श्री मूलसंघे कुन्दकुन्दाम्नाये बलात्कार गणे सेन गच्छे नन्दी संघस्थ परम्परायां श्री आदिसागरायचार्य जातास्तत् शिष्यः श्री महावीरकीर्ति आचार्य जातास्तत् शिष्यः श्री विमलसागराचार्य जातास्तत् शिष्यः श्री भरतसागराचार्य, श्री विरागसागराचार्य जातास्तत् शिष्यः श्री विशदसागराचार्य जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे राजस्थान प्रान्तार्न्गत श्रीशान्तिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर मालवीयनगर, जयपुर वीर निर्वाण संवत् 2542 कार्तिकमासे शुक्लपक्षे सप्तमी श्री कर्म निर्झर विधान रचना समाप्तं।